THE TIMES OF INDIA

*Date:13-12-22*

# Go Back To 16

## *Response of the criminal justice system to Pocso is reason to revisit the age of consent.*

**TOI Editorials**

The Protection of Children from Sexual Offences Act (Pocso) is a widely supported law. But Pocso raised the age of consent from 16 to 18 and has caused considerable disquiet in the justice system. The increase in threshold appears to be out of sync with ground reality. Consider the following. Recently, Tamil Nadu's director general of police issued a circular to the force asking them to avoid haste in making arrests under Pocso as many cases involve relationships based on consent. Independently, some constitutional courts such as Allahabad high court expressed concern about abuse of the law when it comes to relationships between teenagers. Last week, CJI Chandrachud pointed out that the presumption of the law is that there's no consent in the legal sense among those below 18, which poses difficult challenges. He suggested lawmakers address concerns about criminalisation of adolescents who engage in consensual sex.

Research suggests that the increase in the threshold of consent to 18 has led to abuse of the legislation. The most recent study covered three states, West Bengal, Maharashtra and Assam. It found that 25% of Pocso listings were romantic cases. Of them, 47% involved girls between the ages of 16 and 18 where acquittals were the norm. The high incidence of cases involving adolescents between 16 and 18 is consistent with NCRB data. Anecdotal evidence suggests disquiet with this aspect of the law also pushes up pendency. Parliamentarians should revisit the decision to raise the threshold of consent to 18. A decade's experience provides the rationale for it. If MPs are reluctant to take this up, this is a fit case for a PIL.

THE HINDU

*Date:13-12-22*

# Ready for the worst

## *Governments and agencies have shown better preparedness for cyclones.*

**Editorial**

That Cyclone Mandous, which had its landfall near Mamallapuram, near Chennai, in the early hours of Saturday, did not cause much damage has come as a huge relief to the people of Tamil Nadu and Andhra Pradesh. At one stage, it was expected to develop into a "severe cyclonic storm", but did not gain much strength. Called a "textbook cyclone", the storm, as predicted by the India Meteorological Department, crossed the coast with all the attendant features, to the satisfaction of professional meteorologists. Though Cyclone Mandous was similar to Cyclone Vardah which made landfall in Chennai in mid-December 2016, this event dumped heavy rainfall that was far more than what occurred under Vardah. This time, not only parts of north Tamil Nadu but also areas in neighbouring Andhra Pradesh experienced heavy rainfall. For instance, Vembakkam in Tiruvannamalai district of Tamil Nadu and Srikalahasti in Tirupati district of Andhra Pradesh bore the brunt, recording rainfall of 25 cm and 23 cm, respectively, during the 24-hour-period that ended at 8.30 a.m. on Saturday. But more noteworthy was the way the official machinery in Tamil Nadu steered the disaster management system. Despite the cyclone crossing the coast at almost midnight and causing a number of trees and structures to fall, the response of the administration was swift and the common man's life hardly disrupted. Five lives were lost, a count much lower than during disasters of a similar magnitude.

After drawing flak in November 2021, and, subsequently, when Chennai and its vicinity experienced inundation following spells of heavy rain, the Tamil Nadu government has been paying greater attention this time to improving the storm-water drain network and such other works. Though one of the reasons cited for many areas being spared of flooding was that the core parts of the city did not receive as much rain as the interior parts of north Tamil Nadu, the State government's coordination with the Meteorological Department and its preparedness in tackling the post-landfall situation made a difference to the situation this time. Otherwise, as in the past, citizens would have suffered even in light rain. Technology too, both in terms of forecast and information dissemination, has been playing a key role. The authorities, i.e., the State government and the Meteorological department, should continuously work to improve their ways of functioning, making use of technology, and helping people to be ready to face a natural disaster of this nature or even of greater strength. Ideally, the official machinery should set a goal of ensuring no loss to life. Such a task would not be impossible, given the availability of resources, both hardware and software, and empirical data on cyclones and severe cyclones crossing the coast of Tamil Nadu.

दैनिक जागरण

*Date:13-12-22*

# जी-20 अध्यक्षता का कांटों भरा ताज

**हर्ष वी. पंत, ( लेखक आब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में रणनीतिक अध्ययन कार्यक्रम के निदेशक हैं )**

इस महीने के आरंभ में भारत ने विधिवत जी-20 की अध्यक्षता संभाल ली है। भारत के लिए यह गर्व की अनुभूति कराने वाला है कि उसे एक महत्वपूर्ण वैश्विक संगठन की अध्यक्षता मिली है। यूं तो जी-20 की अध्यक्षता बारी-बारी से सदस्य देशों को मिलती है, लेकिन जिस दौर में भारत को यह कमान मिली है, उसकी बड़ी अहमियत है। पूरी दुनिया कोविड महामारी से उबरी भी नहीं थी कि रूस और यूक्रेन के बीच छिड़े युद्ध ने तमाम समीकरण बिगाड़ दिए। इससे बिगड़ी आपूर्ति शृंखला ने कई देशों को दिवालिया बनाने के कगार पर पहुंचा दिया। विकसित देशों में भी महंगाई ने रिकार्ड तोड़ दिया। पूरी दुनिया में आर्थिक सुस्ती का माहौल बन गया। एक ओर पश्चिमी देशों और रूस के बीच संघर्ष विराम के कोई आसार नहीं दिख रहे तो दूसरी ओर चीन और अमेरिका के बीच तनाव घटने का नाम नहीं ले रहा। ऐसी तनातनी का सबसे बड़ा खामियाजा गरीब और विकासशील देशों को भुगतना पड़ रहा है। संप्रति समग्र वैश्विक परिदृश्य चुनौतियों से दो-चार है। चूंकि जी-20 विश्व की शीर्ष अर्थव्यवस्थाओं का संगठन है तो इसका दारोमदार उस पर ही है कि वह इन मौजूदा संकटों का समाधान निकालने की दिशा में सक्रिय हो, मगर इससे जुड़े कुछ अंशभागियों के बीच टकराव से यह आसान नहीं लगता। इसलिए समझा जा सकता है कि जी-20 अध्यक्ष का ताज भारत के लिए कितना कांटों भरा साबित होने वाला है। अपनी अध्यक्षता को सफल बनाने के लिए भारत को कड़ी मशक्कत करनी होगी। हालिया रुझान यही दर्शाता भी है कि भारत ने इस दिशा में सक्रिय होकर संतुलन साधने की कवायद शुरू कर दी है।

इसका पहला संकेत तो तब देखने को मिला जब ऐसी खबरें आईं कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी इस साल रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के साथ शिखर वार्ता के लिए रूस नहीं जाएंगे। दोनों देशों के बीच दिसंबर में वार्षिक शिखर वार्ता होती है, जिसमें राष्ट्राध्यक्ष बारी-बारी से एक दूसरे के देश जाते हैं। इस बार मोदी के रूस जाने की बारी थी, जिसके आसार अब नहीं दिखते। विदेश मंत्रालय ने इसके पीछे कोई आधिकारिक वजह तो नहीं बताई है, लेकिन कूटनीतिक हलकों में व्यापक रूप से यही माना जा रहा है कि रूस को लेकर वैश्विक आक्रोश के चलते भारत यह कदम उठाने जा रहा है। खासतौर से रूस ने जिस प्रकार बार-बार परमाणु हेकड़ी दिखाई है, उससे उसके प्रति धारणा खराब हुई है। ऐसी स्थिति में भारत नहीं चाहता कि रूसी राष्ट्रपति के साथ उसकी गलबहियों से वैश्विक स्तर पर किसी तरह का नकारात्मक संदेश जाए। हाल में इंडोनेशिया में हुए जी-20 सम्मेलन में भी रूस के प्रति वैश्विक भावनाएं मुखरता से अभिव्यक्त हुई थीं। इसलिए भारत नहीं चाहेगा कि उसकी अध्यक्षता के दौरान व्यापक संबंधों पर द्विपक्षीय पहलू से कोई ग्रहण लगे। इसके लिए भारतीय विदेश नीति की सराहना भी करनी होगी कि वह रूस को नाराज किए बिना ही अपने हितों को साधने में सफल हो रही है।

यह वह दौर है जब तमाम जिम्मेदार वैश्विक संगठन अपनी जिम्मेदारियों से मुकरते दिख रहे हैं। उनका पराभव हो रहा है। नेतृत्व निर्वात की स्थिति है। विशेष रूप से ग्लोबल साउथ यानी विकासशील देशों की सुनवाई के लिए कोई तैयार नहीं। यह भारत के लिए स्वाभाविक नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित होने का सुनहरा अवसर है। भारत इस मौके को

भुनाने के लिए तत्पर भी दिखता है। इसके संकेत जी-20 की अध्यक्षता संभालने के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के शब्दों से भी मिले, जिसमें उन्होंने कहा कि 'हमारी जी-20 प्राथमिकताओं को न केवल हमारे जी-20 भागीदारों, बल्कि ग्लोबल साउथ वाले हिस्से में हमारे साथ चलने वाले देशों, जिनकी बातें अक्सर अनसुनी कर दी जाती हैं, के परामर्श से निर्धारित किया जाएगा।' वास्तव में, इस समय शक्तिशाली देशों के बीच चल रहे संघर्ष से जो खाद्य और ईंधन संकट उत्पन्न हुआ है, उसकी सबसे ज्यादा मार इन्हीं देशों पर पड़ रही है। यही कारण है कि भारत ने इन समस्याओं से निपटने के लिए माहौल बनाना शुरू कर दिया है। भारत बार-बार तनाव घटाने को लेकर सचेत कर रहा है। इसके पीछे यही मंशा है कि वैश्विक स्तर पर शांति एवं स्थायित्व कायम हो। मौजूदा अस्थिरता दूर हो सके। पर्यावरण संरक्षण के लिए भी प्रधानमंत्री भारतीय संस्कृति में समाहित सूत्रों को साझा कर रहे हैं। भारत की ओर से विकसित देशों को आईना दिखाते हुए व्यापक वैश्विक सुधारों के लिए दबाव भी बनाया जा रहा है। इन सुधारों से सबसे अधिक लाभान्वित विकासशील देश ही होंगे।

स्पष्ट है कि इस चुनौतीपूर्ण परिवेश में भारत अपने प्रयासों से स्वयं को वैश्विक नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित करने की दिशा में सक्रिय होकर यही संदेश देना चाहता है कि वह अंतरराष्ट्रीय शांति एवं स्थायित्व को सुनिश्चित करने में सेतु की भूमिका निभाने के लिए तैयार है। यह जी-20 की अध्यक्षता को सफलता दिलाने के लिए आवश्यक भी है। पूरा विश्व इस समय भारत को बड़ी उम्मीद से देख भी रहा है। फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुअल मैक्रों से लेकर जर्मन विदेश मंत्री एनालेना बेयरबाक तक तमाम नेता कह चुके हैं कि भारत जी-20 की अध्यक्षता को एक नया आयाम देगा। ऐसे में भारत के लिए आवश्यक हो चला है कि इस समय वह अपनी विदेश नीति में द्विपक्षीय भाव से अधिक बहुपक्षीय भावनाओं को वरीयता दे। तभी वह विभिन्न अंशभागियों के बीच किसी सहमति का निर्माण कर अपनी अध्यक्षता को सफलता दिला सकेगा। बदलते वैश्विक ढांचे में इससे भारत का कद और बढ़ेगा। मूल रूप से आर्थिक हितों से जुड़ा संगठन होने के नाते जी-20 में भरपूर संभावनाएं हैं कि उसके माध्यम से भू-राजनीतिक तनाव और टकरावों को दूर किया जा सके। यह इसलिए आवश्यक हो गया है, क्योंकि फिलहाल संयुक्त राष्ट्र जैसी संस्थाएं अपने इस मूल दायित्व की पूर्ति में विफल दिख रही हैं। यही उम्मीद है कि भारत विश्व के समक्ष कायम मुश्किलों को एक अवसर के रूप में ढालकर अपने नेतृत्व से वैश्विक छाप छोड़ने में सफल होगा, जैसा कि उसने कोविड महामारी में भी किया था।

---

बिज़नेस स्टैंडर्ड

*Date:13-12-22*

# कॉप27 सम्मेलन में हाथ लगी नाकामी

**सुनीता नारायण**

यह कहना विशुद्ध हताशा का परिचायक है कि दुनिया ने मिस्र के तटवर्ती शहर शर्म अल-शेख में संपन्न क्लाइमेट चेंज कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज (कॉप27) में 'कुछ' हासिल हुआ है। तथ्य तो यह है कि कॉप27 को उत्सर्जन कम करने संबंधी तीन दशक लंबी वार्ताओं के इतिहास में सबसे खराब घटना के रूप में दर्ज किया जाना चाहिए। इन उत्सर्जनों ने बड़े पैमाने पर क्षति पहुंचाई है। यह बैठक एक बड़े मजमे की तरह थी, काफी हद तक रेगिस्तान में मरीचिका की भांति। इससे अत्यधिक

सक्रियता की भावना बनी जबकि वास्तव में वहां हुआ क्या? इस खतरनाक खतरे से निपटने की दिशा में अब तक जो थोड़ी बहुत प्रगति हुई थी वह भी गंवा दी गई।

मैं भी इस सम्मेलन में शामिल करीब 45,000 लोगों में से एक थी। जिस बात ने मुझे चकित किया वह यह कि इसे कुछ इस तरह तैयार किया गया था कि यह वार्ता से जुड़ा तमाम दबाव कम हो जाए। इसके आयोजकों यानी संयुक्त राष्ट्र के जलवायु परिवर्तन सचिवालय और हमारे मेजबान यानी मिस्र की सरकार ने विभिन्न देशों और एजेंसियों के सैकड़ों पविलियन तैयार किए थे। इनमें से प्रत्येक में एक छोटा सा सम्मेलन कक्षा था जहां रोज पांच से छह आयोजन होते थे। इनमें से प्रत्येक आयोजन में 30-35 लोग हिस्सेदारी करते थे। पूरा दिन इतना कुछ होता रहता था कि कॉप27 का मूल मुद्दा यानी उत्सर्जन में कमी और जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने संबंधी बातचीत हाशिये पर चली गई।

इसलिए जब मैं कहती हूं कि कॉप27 का अंतिम निर्णय दरअसल अनिर्णय जैसा ही था तो चकित होने की आवश्यकता नहीं है। तमाम महत्त्वपूर्ण बातों को 20 नवंबर की सुबह तक कोष्ठक में रखा गया (जब विभिन्न पक्ष असहमत होते हैं तो संयुक्त राष्ट्र यही भाषा इस्तेमाल करता है) जब तक कि उनके बीच सहमति नहीं बन गई। यह सहमति बहुत हल्की भाषा में थी। हममें साहस नहीं है कि हम ऐसा कह सकें। लॉस ऐंड डैमेज फंड (वैश्विक तापवृद्धि के कारण हुए नुकसान के लिए कमजोर देशों को मुआवजा देने के वास्ते स्थापित) के मुद्दे को कॉप27 की बड़ी कामयाबी माना जा रहा है। शर्म अल-शेख क्रियान्वयन योजना 'विकासशील देशों को होने वाले लॉस और डैमेज से जुड़ी वित्तीय लागत को लेकर गहरी चिंता प्रकट करती है।'

यह जलवायु परिवर्तन के विपरीत प्रभावों से संबद्ध है। इसके आगे योजना में कहा गया है कि यह लॉस ऐंड डैमेज को हल करने के लिए संस्थागत व्यवस्था कर रही है और यह भी कि इससे उन विकासशील देशों को तकनीकी सहायता को प्रेरणा मिलेगी जो जलवायु परिवर्तन को लेकर सबसे अधिक जोखिम में हैं। इकलौता निर्णय यह है कि 2023 तक सचिवालय के लिए मेजबान देश तलाश कर लिया जाएगा। इस तरह देखें तो फंड बनाने को लेकर कोई सहमति नहीं बनी, इस बात पर भी सहमति नहीं बनी कि इसके लिए भुगतान कौन करेगा लेकिन एक नई श्रेणी अवश्य तैयार हुई कि यह सब अब उन देशों की ओर लक्षित होगा जो सबसे अधिक जोखिम में हैं। वे कौन से देश हैं? राजनीति यहीं शुरू होती है।

क्या भारत जैसे बड़े विकासशील देशों को नुकसान के लिए अन्य विकासशील देशों को भुगतान करना चाहिए? कॉप27 में यह सवाल बार-बार उठा और जाहिर है इसका विरोध भी हुआ। उसके बाद क्या भारत जैसे देश जोखिम वाले देशों की श्रेणी में आते हैं क्योंकि यहां पहाड़ और तट रेखा दोनों हैं? वार्ता के अगले दौर में इसका विरोध होगा और बात किसी नतीजे पर नहीं पहुंचेगी जबकि इस बीच प्राकृतिक आपदाएं बढ़ती जा रही हैं और आम जन तथा अर्थव्यवस्थाओं को होने वाला नुकसान भी बढ़ रहा है।

यही कारण है कि दुनिया जलवायु को लेकर एक नियम आधारित व्यवस्था की ओर लौटने की आवश्यकता है। हमें पता है कि मौसमी आपदाओं की बढ़ती संख्या और आवृत्ति का संबंध जलवायु परिवर्तन से है और यह जलवायु परिवर्तन की घटना वातावरण में ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन से संबंधित है। ऐसे में विधि का सीधा सा स्थापित सिद्धांत यह कहता है कि जो देश प्रदूषण के लिए जिम्मेदार है उसे भुगतान करना चाहिए। यही कारण है कि नुकसान और क्षति से संबंधित चर्चाएं देनदारी और क्षतिपूर्ति पर आधारित हैं। इस नियम आधारित परिदृश्य में यह बात स्थापित होगी कि भारत जैसे

देश को भी फंड में योगदान करना होगा लेकिन केवल तभी जब वह ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन की एक तयशुदा सीमा पार कर जाएगा। यह नियम आधारित व्यवस्था बड़े प्रदूषकों के लिए उपयुक्त नहीं है इसलिए इसे 2015 में पेरिस समझौते से अलग कर दिया गया था। अब प्रदूषकों के बीच भेद करने की कोई व्यवस्था है इसलिए चीन जैसे देशों को सहज ही अवसर मिल गया है कि वे इसका फायदा उठाएं। चीन का प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन 2030 में अमेरिका के बराबर हो जाएगा।

उसे प्रदूषकों की श्रेणी में होना चाहिए था। परंतु अभी भी वह 77 विकासशील देशों के पीछे छिपा हुआ है। साफ कहें तो इन 77 विकासशील देशों को भी ताकतवर चीन की शरण लेने में राहत मिलती है। यह खेल हमारी कीमत पर जारी है।

परंतु मैंने कॉप27 को प्रतिगामी क्यों कहा? ऐसा इसलिए कि पहली बार समझौते में सफेद और हरे जीवाश्म ईंधन में फर्क करने का निर्णय किया गया। अंतिम समय में स्वच्छ ऊर्जा वाले मिश्रण में में कम उत्सर्जन वाली ऊर्जा को शामिल कर दिया गया। यानी यह बताने की कोशिश की प्राकृतिक गैस अपेक्षाकृत स्वच्छ है क्योंकि यह कोयले की तुलना में आधा कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जित करती है। यूरोपीय संघ ने प्राकृतिक गैस को स्वच्छ बताते हुए यही कहा था। हमें पता है कि दुनिया के उस हिस्से में जहां अकार्बनीकरण की अधिक आवश्यकता है वह पूरे विश्व में और अधिक प्राकृतिक गैस के लिए खुदाई कर रहा है। इन देशों में सम्मेलन का मेजबान देश मिस्र भी शामिल है।

यह सब सही नहीं है। दुनिया तेजी से औद्योगिक युग के पहले के स्तर से 1.5 डिग्री सेल्सियस अधिक तापवृद्धि की ओर बढ़ रहा है। 1.1 डिग्री सेल्सियस वृद्धि के साथ ही हमें इतने बड़े पैमाने पर बरबादी और इंसानी दिक्कतें देखने को मिल रही हैं। हम इसका हिस्सा नहीं बन सकते। हम कम से कम ऊंची आवाज में यह तो कह सकते हैं कि हम बुरी तरह नाकाम हुए हैं।

---

जनसत्ता

*Date:13-12-22*

# असंतुलित भागीदारी

**संपादकीय**

मुख्यधारा की राजनीति में महिलाओं की कम उपस्थिति को लेकर राजनीतिक दल लंबे समय से चर्चा करते रहे हैं, लेकिन इसके सुचिंतित हल को लेकर शायद ही कभी ईमानदारी दिखाई देती है। इस बार हिमाचल प्रदेश विधानसभा चुनाव नतीजों के बाद यह मुद्दा सुर्खियों में है कि वहां अड़सठ सदस्यीय विधानसभा में सिर्फ एक महिला विधायक होगी। हालांकि इस बार के चुनाव में वहां अलग-अलग दलों की ओर से कुल चौबीस महिला प्रत्याशी थीं। जहां तक महिला मतदाताओं की संख्या का सवाल है, तो वहां उनका अनुपात उनचास फीसद है। चुनावों के नतीजों के बाद आए आंकड़ों के मुताबिक इस बार के विधानसभा चुनावों में महिलाओं का मतदान पुरुषों के मुकाबले ज्यादा (76.8 फीसद) रहा। हालांकि 2017 में हुए विधानसभा चुनावों में भी कुल सीटों की दृष्टि से कोई बहुत अच्छी तस्वीर नहीं थी और उसमें सिर्फ चार महिलाओं ने कामयाबी हासिल की थी। मगर महिला प्रतिनिधित्व के लिहाज से देखें तो इस बार के चुनावों में स्थिति

और दयनीय हुई है। दूसरी ओर, गुजरात में भी पिछले विधानसभा चुनाव में तेरह के मुकाबले इस बार सिर्फ दो महिला प्रतिनिधियों की बढ़ोतरी हुई। जबकि वहां विधानसभा की कुल क्षमता एक सौ बयासी विधायकों की है और इस बार कुल एक सौ उनतालीस महिलाएं चुनाव के मैदान में थीं।

जाहिर है, जिस दौर में हर क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए आवाज उठ रही है, सरकारों की ओर से कई तरह के विशेष उपाय अपनाए जा रहे हैं, वैसे समय में राजनीति में महिलाओं की इस स्तर तक कम नुमाइंदगी निश्चित रूप से सबके लिए चिंता की बात होनी चाहिए। लेकिन यह केवल हिमाचल प्रदेश या गुजरात जैसे राज्यों की बात नहीं है। पिछले हफ्ते लोकसभा में सरकार की ओर से पेश आंकड़ों के मुताबिक, आंध्र प्रदेश, असम, गोवा, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, केरल, कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, ओड़िशा, सिक्किम, तमिलनाडु और तेलंगाना में दस फीसद से भी कम महिला विधायक हैं। देश की संसद में थोड़ा सुधार हुआ है, लेकिन आज भी लोकसभा और राज्यसभा में महिला सांसदों की हिस्सेदारी करीब चौदह फीसद है। यानी आमतौर पर आधी आबादी के नाम से जानी वाली महिलाओं की भागीदारी मुख्यधारा राजनीति में आज भी संतोषजनक स्तर तक नहीं पहुंच सकी है। जबकि सच्चाई यह है कि राष्ट्रीय राजनीति में प्रतिनिधित्व की कसौटी पर अगर कोई सामाजिक तबका पीछे रह गया है तो बाकी सभी क्षेत्रों में उसकी उपस्थिति पर इसका सीधा असर पड़ता है।

सवाल है कि जो राजनीतिक दल आए दिन महिलाओं के अधिकारों की बात करते रहते हैं, वे अपने ही ढांचे में भागीदारी के लिए कितना साहस कर पाते हैं। अमूमन सभी पार्टियां चुनाव के वक्त महिलाओं को टिकट देने के मामले में अपने वादों और दावों जितना ही उत्साह नहीं दिखा पातीं। इस तरह की कोई पहलकदमी तो दूर, संसद और विधानसभाओं में महिलाओं के लिए तैंतीस फीसद आरक्षण सुनिश्चित करने का मुद्दा पिछले करीब ढाई दशक से अधर में लटका है। कभी-कभार इसे लेकर सुगबुगाहट दिखाई पड़ती है, मगर महिला आरक्षण को कानून बनाने की दिशा में राजनीतिक दलों की ओर से कभी ठोस पहल नहीं की जाती। आखिर क्या वजह है कि जब संसद में बिना बहस के भी कई विधेयक पारित हो जाते हैं, तब भी संसद और विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कानूनी तौर पर सुनिश्चित कराने को लेकर राजनीतिक पार्टियां गंभीर नहीं दिखती हैं? यह एक तथ्य है कि जिन राज्यों में स्थानीय स्तर के चुनावों में महिलाओं के लिए आरक्षित सीटों का निर्धारण किया गया, वहां एक हद तक उनकी नुमाइंदगी में बढ़ोतरी देखी गई।

---

***Date:13-12-22***

# चुनौतियों के बरक्स एक अवसर

**परमजीत सिंह वोहरा**

भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने सदा अवसरों की तुलना में चुनौतियां अधिक रही हैं। आजादी के बाद के पहले चार दशक तक अर्थव्यवस्था सरकारी नियंत्रण में थी और उसका मुख्य जोर कृषि क्षेत्र को विकसित करने और आधारभूत संरचना के विकास पर केंद्रित था। उस दौरान भी पड़ोसी देशों से युद्ध, अकाल के कारण खाद्यान्न की कमी आदि चुनौतियों का सामना करना पड़ा। फिर भी आर्थिक नीतियों में सदा पूर्वानुमान को प्राथमिकता देते हुए सर्वांगीण विकास को महत्त्व दिया गया। 1990 के आर्थिक सुधारों के बाद आर्थिक विकास में तेजी आई, जिसके चलते आर्थिक विकास के स्तर पर आज

भारत विश्व के शीर्ष मुल्कों में पांचवें पायदान खड़ा है। आज भारतीय अर्थव्यवस्था तकरीबन साढ़े तीन खरब अमेरिकी डालर के बराबर है। हालांकि इन सबके बावजूद भारत के लिए आर्थिक चुनौतियां अब भी बनी हुई हैं, जिनमें विशाल जनसंख्या के लिए रोजगार, महंगाई, गरीबी और अमीरी के बीच लगातार बढ़ती खाई, शिक्षा में गुणवत्ता का स्तर, ग्रामीण व्यक्ति के आर्थिक स्तर में प्रगति, असंगठित क्षेत्रों में संलग्न व्यक्तियों को आर्थिक सुरक्षा, छोटे उद्योगों में लागत तथा गुणवत्ता के स्तर पर अच्छी जानकारियों का अभाव आदि मुख्य हैं।

इन सबके बीच भारत को जी-20 देशों का नेतृत्व करना है। निश्चित रूप से यह एक ऐसा अवसर है, जिसे भारत आगामी एक वर्ष तक अपने आर्थिक दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अच्छे ढंग से नियोजित कर सकता है। अगर इसका क्रियान्वयन सकारात्मक रहा तो भारतीय अर्थव्यवस्था को पांच खरब अमेरिकी डालर तक पहुंचने में ज्यादा समय नहीं लगेगा और भारत विश्व के तीन शीर्ष आर्थिक महाशक्तियों में शुमार हो जाएगा।

गौरतलब है कि जी-20 की स्थापना एशिया महाद्वीप में 1997-98 के दौरान शुरू हुए आर्थिक संकट से निपटने के लिए हुई थी। उस दौरान जब थाईलैंड ने अपनी मुद्रा को अमेरिकी डालर की तुलना में नियंत्रित करने की कोशिश की, तो उसके दुष्प्रभाव फिलीपींस, मलेशिया, दक्षिण कोरिया आदि देशों पर पड़े थे। तब एशिया महाद्वीप के आर्थिक संकट का बड़ी अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकने के लिए विश्व के सबसे बड़े आर्थिक संगठन जी-8 को विस्तार देकर जी-20 बनाया गया था। आज के वर्तमान परिदृश्य में जी-20 के अंतर्गत सम्मिलित सभी देशों की अर्थव्यवस्था का वर्तमान स्तर पचहत्तर खरब अमेरिकी डालर है, जो लगभग वैश्विक जीडीपी का पचासी प्रतिशत है। इसके अलावा संपूर्ण विश्व के अंतरराष्ट्रीय व्यापार में जी-20 में सम्मिलित देशों का योगदान पचहत्तर प्रतिशत है। यह इस बात को स्पष्ट करता है कि जी-20 में सम्मिलित सभी मुल्क आज के दौर की सभी वैश्विक आर्थिक नीतियों के ढांचे को निर्धारित करने के पीछे मुख्य भूमिका निभाते हैं। जी-20 में शामिल मुल्कों में अमेरिका, चीन, जर्मनी, भारत और जापान की विश्व की आधी से अधिक आबादी निवास करती है। विश्व के बड़े आर्थिक संस्थान, जिनमें विश्व बैंक, आइएमएफ, संयुक्त राष्ट्र, डब्ल्यूटीओ आदि जी-20 के मुख्य भाग हैं, इसलिए यह एक बड़ी उपलब्धि है कि भारत ने जी-20 जैसे आर्थिक संगठन की कमान संभाली है।

इन दिनों वैश्विक स्तर पर आर्थिक अनिश्चितता है। इसके पीछे कोरोना महामारी के आर्थिक दुष्प्रभाव कारण हैं, तो वहीं पिछले ग्यारह महीनों से रूस और यूक्रेन के बीच चल रहा युद्ध भी एक मुख्य समस्या है। इसी वर्ष श्रीलंका का आर्थिक संकट भी पूरे विश्व ने देखा। फिर इस बात की भी सुगबुगाहट है कि अमेरिकी आर्थिक नीतियों के चलते वैश्विक स्तर पर आर्थिक मंदी आने को है। अमेरिकी फेड द्वारा जानबूझ कर लगातार की जा रही ब्याज दरों में बढ़ोतरी से तुलनात्मक रूप से अमेरिकी डालर वैश्विक स्तर पर मजबूत हो रहा है, जिसके चलते दूसरे देशों की मुद्रा पर नकारात्मक असर पड़ रहा है। सभी मुल्कों में आयात महंगा होता जा रहा है, जिससे घरेलू स्तर पर महंगाई बढ़ रही है। जिन विकासशील मुल्कों ने कई वैश्विक आर्थिक संस्थानों से कर्ज लिए हुए हैं, डालर की मजबूती उन्हें और अधिक ब्याज का भुगतान करने के लिए विवश कर रही है। रूस और यूक्रेन युद्ध के चलते वैश्विक स्तर पर कच्चे तेल के मूल्य बढ़ गए हैं। उर्वरकों की आपूर्ति में कमी देखी जा रही है, जो कृषि क्षेत्र को प्रभावित कर रही है। इन सब आर्थिक चुनौतियों से निपटने के लिए पूरा विश्व जी-20 से एक सकारात्मक सोच और नई नीतियों की अपेक्षा कर रहा है।

पिछले दिनों जब जी-20 का नेतृत्व मिला तो इस बात पर मंथन शुरू हो गया कि इसके माध्यम से भारत अपनी अर्थव्यवस्था को क्या-क्या अवसर उपलब्ध करा सकता है? भारतीय अर्थव्यवस्था के सामने मुख्य चुनौतियों में कृषि क्षेत्र

को उन्नत करना, बेरोजगारी का निवारण, आधारभूत संरचनाओं को वैश्विक स्तर का बनाना और निर्माण के क्षेत्र में भारत के उद्योग-धंधों को अधिक से अधिक वैश्विक अवसर उपलब्ध कराना मुख्य है। यह भी स्पष्ट है कि आज भारत वैश्विक स्तर पर अपनी क्रय क्षमता के कारण एक बड़ी पहचान रखता है, पर अब भारत को आत्मनिर्भर बनने की भी अत्यंत आवश्यकता है। जी-20 समूह के अंतर्गत विश्व के चार अन्य राष्ट्र, जो भारत से बड़ी आर्थिक महाशक्तियां हैं, उनमें भारत की चीन पर आर्थिक निर्भरता तुलनात्मक रूप से काफी अधिक है। चीन के साथ भारत का आयात पचासी प्रतिशत के आसपास है, तो वहीं निर्यात तकरीबन दस से पंद्रह प्रतिशत के बीच है। चालू वित्त वर्ष में भारत का चीन से आयात तकरीबन नवासी अरब डालर का है, तो वहीं निर्यात सिर्फ चौदह अरब डालर है।

यह एक ऐसी चुनौती है, जिसका हल भारत को जल्दी तलाशना होगा और आगामी एक वर्ष में उसके माध्यम से विश्व की अन्य बड़ी महाशक्तियों को भारत के प्रति आकर्षित करना होगा अन्यथा अर्थव्यवस्था के वर्तमान आर्थिक स्तर को तेजी से बढ़ाना मुश्किल होता जाएगा। इसे इस तरह से भी लिया जा सकता है कि अगर भारत को विश्व की बड़ी आर्थिक महाशक्ति बनना है, तो उसे सबसे पहले चीन के साथ आर्थिक लड़ाई में आत्मनिर्भरता की तरफ मुड़ना पड़ेगा और इसके लिए जी-20 समूह के दूसरे बड़े राष्ट्रों को आकर्षित करना एक विकल्प के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में पिछले काफी समय से आधारभूत संरचना के विकास पर तेजी से काम हुआ है, जिसमें राष्ट्रीय राजमार्गों का निर्माण सबसे शीर्ष पर है। इसके अलावा आर्थिक नीतियों की मुख्य प्राथमिकताओं में रेलवे का विकास और टेलीकाम क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन, ऊर्जा के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता तथा समुद्री क्षेत्र का आधुनिकीकरण है। इंटरनेट प्रौद्योगिकी में भी महानगरों में 5जी की शुरुआत हो चुकी है, जिससे निश्चित रूप से आने वाले समय में व्यावसायिक गतिविधियों में बहुत तेजी देखने को मिलेगी। हालांकि इन सबके बीच लगातार बढ़ रही आर्थिक विषमता भारत के सामने एक ऐसी आर्थिक चुनौती है, जो गरीबी उन्मूलन के लिए बहुत बड़ा संकट है। इन सब चुनौतियों के निवारण हेतु जी-20 का नेतृत्व करते हुए भारत को अपने लिए कुछ आर्थिक उद्देश्य निश्चित करने चाहिए। उनमें विभिन्न वैश्विक आर्थिक संस्थानों से बुनियादी ढांचे के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त करना और आयात लागत को तुलनात्मक रूप से कम करने के लिए आर्थिक महाशक्तियों के साथ अंतरराष्ट्रीय व्यापार को बढ़ाना मुख्य उद्देश्य हों। अगर यह संभव हो पाता है, तो भारत अपना विदेशी मुद्रा भंडार सदा सुरक्षित रखने में सक्षम हो पाएगा। विश्व की नामी-गिरामी कंपनियों को 'मेक इन इंडिया' के तहत एशिया महाद्वीप में चीन के बजाय भारतीय प्राथमिकता दिलाना भी मुख्य उद्देश्य होना चाहिए।

---

राष्ट्रीय सहारा

*Date:13-12-22*

# बदलनी तो चाहिए तस्वीर

**मनोज चतुर्वेदी**

भारतीय खेलों में पिछले कुछ सालों से एक अच्छा ट्रेंड 'देखने को मिल रहा है। यह ट्रेंड है खेल संगठनों का बॉस खिलाड़ियों का बनना । इस सिलसिले को आगे बढ़ाते हुए अपने समय की बेहतरीन धाविका पीटी ऊषा देश के सर्वोच्च खेल संगठन भारतीय ओलंपिक एसोसिएशन के अध्यक्ष पद पर पहुंची हैं। पीटी ऊषा को निर्विरोध अध्यक्ष चुना गया है। पाय्योली एक्सप्रेस के नाम से मशहूर रहीं पीटी ऊषा ने 1980 के दशक में एशियाई खेलों सहित तमाम अंतरराष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में पदकों का अंबार जुटाया। पर उनका 1984 के लास एंजिल्स ओलंपिक की 400 मीटर बाधा दौड़ में सेकंड के सौवें हिस्से से पिछड़कर कांस्य पदक से हाथ धोने को हमेशा याद किया जाता है।

पीटी ऊषा से पहले सिर्फ एक और खिलाड़ी महाराजा यदुविंद्र सिंह आईओए अध्यक्ष बने थे। उन्होंने 1934 में इकलौता क्रिकेट टेस्ट खेला था और वह 1938 में अध्यक्ष बने थे। भारतीय खेलों की कमान खिलाड़ियों को देने की मांग जमाने से की जाती रही है। पर पिछले कुछ सालों से इस तरफ ध्यान दिया जाना खेलों के स्वास्थ के लिए अच्छा संकेत है। हम सभी जानते हैं कि दुनिया के सबसे अमीर खेल संगठन माने जाने वाले बीसीसीआई की कमान कुछ सालों पहले देश के सफलतम टेस्ट कप्तानों में शुमार रखने वाले सौरव गांगुली के हाथों में थी। अब उनकी जगह यह जिम्मेदारी एक अन्य क्रिकेटर रोजर बिन्नी के हाथों में सौंपी गई है। इसी तरह भारतीय एथलेटिक्स फेडरेशन के अध्यक्ष आदिल सुमारिवाला, हॉकी इंडिया की कमान पूर्व भारतीय कप्तान दिलीप टिर्की के हाथों में दी गई। इसी तरह भारतीय फुटबाल फेडरेशन के अध्यक्ष भारतीय टीम के पूर्व गोलकीपर कल्याण चौबे बने हैं। इन संगठनों की कमान खिलाड़ियों के हाथों में आने के परिणाम अभी आने बाकी हैं। हम सभी जानते हैं कि आईओए पिछले काफी समय राजनीति का शिकार था । अंतरराष्ट्रीय ओलंपिक समिति ने तो इस माह तक चुनाव नहीं कराने पर उसे निलंबित करने तक की चेतावनी दे दी थी। पर दो धड़ों के टकराव की वजह से चुनाव टलते आ रहे थे। आखिरकार सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप के बाद ही चुनाव संपन्न हो सके हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने अवकाश प्राप्त न्यायाधीश नागेश्वर राव की देखरेख में चुनाव कराए हैं। इन चुनावों के बाद लगता है कि स्वच्छ हवा का झोका खेल गतिविधियों को पटरी पर ला सकेगा। देश की सर्वोच्च खेल संस्था आईओए के अध्यक्ष पद पर पीटी ऊषा के पहुंचने में इसके नये बने संविधान ने अहम भूमिका बनाई है। असल में इससे पहले राष्ट्रीय खेल फेडरेशनों और राज्य एसोसिएशनों के प्रतिनिधि ही अध्यक्ष और अन्य पदाधिकारियों को चुना करते थे। इसलिए पदाधिकारियों खासतौर से अध्यक्ष पद पर राजनेता या नौकरशाह ही पहुंच पाते थे, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय की देखरेख में बने नये संविधान में इलेक्ट्रल कॉलेज में 33 राष्ट्रीय खेल फेडरेशनों के एक-एक पुरुष और महिला प्रतिनिधि, आठ पुरुष और महिला खिलाड़ी और दो एथलेटिक कमीशन के दो खिलाड़ी और अंतरराष्ट्रीय ओलंपिक समिति की सदस्य नीता अंबानी सदस्य हैं। कुल 77 सदस्यों में 39 महिलाएं और 38 पुरुष इलेक्ट्रल कॉलेज में शामिल हैं। पीटी ऊषा का आईओए में साथ निभाने के लिए निशानेबाज गगन नारंग, पहलवान योगेश्वर दत्त, तीरंदाज डोला बनर्जी, टेनिस खिलाड़ी डोला बनर्जी आदि कई खिलाड़ी हैं। नये संविधान के मुताबिक अब सचिव पद खत्म कर दिया या है। उसकी जगह अब सीईओ की नियुक्ति होगी । आईओए के चुने गए पदाधिकारियों की इक यह खूबी है कि पिछले काफी समय से दो धड़ों में बंटे रहे इस संगठन इन घड़ों से जुड़े एक- आदि को छोड़कर कोई नहीं है। नए पदाधिकार्यों में कोषाध्यक्ष सहदेव यादव को जरूर ललित भनोट धड़े से जरूर माना जा रहा है। पर बाकी पदाधिकारी धड़ों से नहीं होने के कारण इस संगठन के अब सुचारू रूप से संचालन की उम्मीद की जा सकती है। पीटी ऊषा ने अध्यक्ष चुने जाने पर कहा भी है कि हमारी कोशिश होगी कि खिलाड़ियों को अपनी समस्याओं के समाधान के लिए भटकना नहीं पड़े। आईओए के दरवाजे हमेशा उनके लिए खुले रहेंगे।

पीटी ऊषा की अगुआई वाले आईओए में तमाम खिलाड़ी होने से यह तो फायदा होगा कि खिलाड़ियों की समस्याओं के समझने वाले होने से उनके हित वाली नीतियां बन सकेंगी। पर यह तब ही संभव हो सकेगा, जब ऊषा अपनी खिलाड़ी

वाली छवि के हिसाब से ही काम करें। असल में केंद्र में शासित भाजपा सरकार ने इस साल पीटी ऊषा को राज्य सभा के लिए मनोनीत कराया था। आईओए चुनाव में भी उन्हें भाजपा समर्थित उम्मीदवार माना जा रहा था। इसलिए उन्होंने राजनैतिक दल के हिसाब से काम किया तो बहुत संभव है कि वह बहुत सफल नहीं हो पाएं। फिर भी यह तो माना ही जा सकता है कि पीटी ऊषा खुद उम्दा खिलाड़ी रहीं हैं, इसलिए खिलाड़ियों की समस्याओं का समाधान जरूर करेंगी। यही नहीं अन्य खिलाड़ियों के सहयोग से आईओए यदि देश में ऐसा खेल माहौल बनाने में कामयाब हो जाता है, जिसमें हमारे खिलाड़ी ओलंपिक जैसे खेलों में डेढ़-दो दर्जन पदक ला सकें। वह अपने कार्यकाल में ऐसा कर सकीं तो उन्हें प्रशासक के रूप में खिलाड़ी की तरह ही दशकों तो याद रखा जाएगा।

---

Live हिन्दुस्तान.com

*Date:13-12-22*

# राष्ट्रपति के दिल से निकला जो सवाल

**विभूति नारायण राय, ( पूर्व आईपीएस अधिकारी )**

अभी ये कौन लोग हैं, जो जेलों मे हैं? एक बड़े और भव्य हॉल में यह प्रश्न गूंजा और सन्नाटा खिंच गया। प्रश्न पूछने वाला भारत का प्रथम नागरिक था और जिनकी तरफ सवाल उछाला गया था, वे न्यायपालिका के शीर्ष पर बैठे वे लोग थे, जिनके कंधों पर नागरिकों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की हिफाजत की जिम्मेदारी है। आमतौर पर ऐसे औपचारिक उद्बोधन, जो किसी धीर-गंभीर विमर्श के उद्घाटन के अवसर पर दिए जाते हैं, मुख्य वक्ता के सामने लिखित रख दिए जाते हैं और वह एक रोबोट की तरह पढ़ देता है। विडंबना यह है कि अमूमन यह लिखित भाषण उसी संस्था द्वारा तैयार किया जाता है, जिसका कार्यक्रम होता है, और इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि उसी की कारगुजारियों की प्रशस्तियों से भरा होता है। सुप्रीम कोर्ट के जिस कार्यक्रम का उद्घाटन करने राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू गई थीं, उसमें भी उनके सामने बोलने के लिए निश्चित रूप से आयोजकों, कानून मंत्रालय या उनके अपने सचिवालय द्वारा कागजों का एक पुलिंदा जरूर रखा गया होगा, पर उन्होंने उसकी उपेक्षा कर एक ऐसा सवाल पूछा, जो सीधे उनके दिल से निकला था और किसी के पास उसका उत्तर नहीं था।

राष्ट्रपति के एक सवाल से कई सवाल गुंथे हुए थे। उन्होंने यह तो पूछा ही कि वे कौन लोग हैं, जो भारतीय जेलों में बंद हैं, जिन्हें न तो अपने मौलिक अधिकारों का पता है, न संविधान की प्रस्तावना का और न ही मौलिक कर्तव्यों का। कहने का मतलब यह कि जेलों मे बंद हाशिये के ये लोग अन्य मानवीय उपलब्धियों के अलावा शिक्षा से भी वंचित हैं। इसके साथ उन्होंने विकास के हालिया मॉडल पर भी सवाल उठाया कि एक तरफ तो कहते हैं, हम विकास की ओर जा रहे हैं, और दूसरी तरफ कहते हैं कि हमारी जेलें भीड़ से बजबजा रही हैं, इसलिए हमें और ज्यादा जेलें चाहिए। इस एक प्रश्न में ही दूसरा प्रश्न निहित था कि यदि हम विकास के जरिये स्वस्थ, साक्षर और संतुष्ट समाज बनाने का दावा कर रहे हैं, तो फिर क्यों हमें अपनी जनसंख्या के बड़े हिस्से को जेलों में बंद रखने की जरूरत पड़ रही है?

राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू की चिंता किसी शून्य से नहीं उपजी थी। वर्षों पहले जब वह ओडिशा विधानसभा की सदस्य चुनी गईं, तब उन्हें गृह विभाग से संबंधित स्थाई समिति का अध्यक्ष नियुक्त कर दिया गया। इस हैसियत से उन्हें ओडिशा के अलग-अलग जिलों की जेलों में जाने का मौका मिला। वहां उन्होंने देखा कि आदिवासियों की एक बड़ी जमात जेलों में बंद है। ज्यादातर मुकदमों में सुनवाई भी वर्षों से लंबित है, कुछ की जमानतें हो गई हैं, पर कई के पास जमानतदार नहीं हैं। ऐसे बहुत से कारण हैं, जिनके चलते असंख्य आदिवासी जेलों में सड़ रहे हैं। राष्ट्रपति खुद आदिवासी समुदाय से आती हैं, वह जानती हैं कि अपने शैक्षणिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश के चलते इन आदिवासियों से यह उम्मीद करना ज्यादती होगी कि वे भारतीय संविधान में निहित अपने मौलिक अधिकारों को जानते होंगे। वे तो अपनी नियति को दोष देते हुए जेलों में अपना समय काटते रहते हैं। आंकड़ों की बात करें, तो देश में अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या 8.6 प्रतिशत है और जेलों में बंद कैदियों में उनका प्रतिशत 10.7 है ।

आदिवासियों के संबंध में व्यक्त चिंता देश में हाशिये पर मौजूद सभी वर्गों पर लागू होती है। इनमें अनुसूचित जातियों और अल्पसंख्यक वर्गों के लोग भी शामिल हैं। देश के सबसे बड़े अल्पसंख्यक समुदाय मुसलमानों की स्थिति इससे बेहतर नहीं है। जातियों व धर्मों से भी परे। और, इन सबमें मौजूद एक तबका ऐसा है, जिसकी सबसे अधिक उपस्थिति जेलों में है, और वह है आर्थिक रूप से असहायों का। जेलों में सबसे अधिक बंद वे हैं, जो भ्रष्ट न्यायिक प्रणाली का पेट नहीं भर सकते। एक अध्ययन के अनुसार, भारत की जेलों में 76 प्रतिशत विचाराधीन कैदी हैं, जिनमें से अधिकांश इसी तबके से आते हैं। वर्षों तक उनके मुकदमों की कोई सुनवाई नहीं होती और वे खचाखच भरी जेलों में सड़ते रहते हैं। कई तो अधिकतम दंड की अवधि से अधिक समय सुनवाई की प्रतीक्षा में बिता देते हैं। ऐसे मामले भी कम नहीं हैं, जिनमें कोई अभागा गरीब इसलिए जेल से बाहर नहीं निकल पा रहा कि उसकी जमानत भरने के लिए कोई संपत्तिवान तैयार नहीं है।

न्यायिक अधिकारियों के सम्मेलन में पूछे गए प्रश्नों के बहाने हमें भारतीय जेलों से जुड़े बुनियादी सुधार के मुद्दों पर भी विचार करना चाहिए। मुझे याद है कि वर्षों पूर्व हिंदी के एक लेखक सुधीर शर्मा ने अपने जीवन के दस वर्ष गोवा जेल में कैदी के रूप में बिताए थे। जेल से लिखा था कि यदि आपके पास पैसा और बाहुबल हो, तो वहां सब कुछ उपलब्ध हो सकता है, घर का खाना, शराब, दूसरे नशे, यौन सुख, सब कुछ। पैसा न हो, तो जेल आपके लिए किसी नरक से कम नहीं है। राष्ट्रपति के उद्‌बोधन के बहाने उन कारणों पर बात होनी चाहिए, जिनके चलते जेल सुधार के केंद्र न होकर अपराधों के अड्डे या नए अपराधी बनाने के कारखाने बन गए हैं। उत्तर प्रदेश के अपने अनुभव से मैं कह सकता हूं कि अपहरण, फिरौती या हत्या के बहुत से मामलों के तार जेलों से जुड़े होते हैं। किसी भोले, निश्छल या निर्मल हृदय किशोर को कुछ दिनों के लिए जेल भेज दें, तो ज्यादा संभावना है कि वह एक कठोर दिल दुर्दांत अपराधी बनकर बाहर निकले ।

इसी सम्मेलन में एक और बुनियादी प्रश्न पूछा गया और यह विकास के वर्तमान मॉडल से संबंधित था। यह भी एक गंभीर सवाल है कि यह कैसा विकास हो रहा है, जिसमें ज्यादा लोगों को जेलों में रखने के लिए नई जेलें तामीर करने की जरूरत पड़ रही है। इसका संबंध सिर्फ आदिवासियों से नहीं है। देश में जिस तरह की असमानता बढ़ी है, उससे निश्चित रूप से अपराध भी बढ़े होंगे। मगर इसका हल क्या अधिक जेलें हैं या राज्य को असमानता दूर करने के लिए ऐसे कदम नहीं उठाने चाहिए, जिनसे यह कम हो और गरीब गुरबा बिना अपराध की दुनिया में कदम रखे सम्मानजनक जीवन जी सके? हमारे देश की राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने जो एक सवाल पूछा था, उससे ये सारे सवाल निकलते ही हैं।

---

*Date:13-12-22*

# पी टी उषा के नेतृत्व में भारतीय ओलंपिक संघ से बढ़ी उम्मीदें

**ज्वाला गुट्टा, ( प्रसिद्ध बैडमिंटन खिलाड़ी )**

पी टी उषा का भारतीय ओलंपिक संघ (आईओए) का अध्यक्ष बनना काफी समय से लंबित था। वह एक किंवदंती हैं, प्रतिमान हैं और मैं उनकी बहुत बड़ी प्रशंसक हूं। मैं रोमांचित हूं कि जिन्हें मैं अपना आदर्श मानती रही हूं, भारतीय ओलंपिक संघ की पहली महिला अध्यक्ष बनने जा रही हैं। वाकई, एक खिलाड़ी-अध्यक्ष चाहे, तो बहुत बदलाव ला सकता है, क्योंकि खिलाड़ियों से उसे खास सहानुभूति होगी। मैं ऐसा इसलिए कह रही हूं, क्योंकि मुझे अच्छा प्रशासन नसीब नहीं हुआ और किसी न किसी वजह से मुझे निशाना बनाया गया था। एक नियमित खिलाड़ी होने के बावजूद मुझे वैसा समर्थन नहीं मिल पाया, जिसकी मुझे हमेशा जरूरत रही।

जब एक खिलाड़ी का भारतीय ओलंपिक संघ में शीर्ष पर होना महत्वपूर्ण है, तब यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि खिलाड़ियों और प्रशासकों का मिला-जुला संगठन ही प्रभावी ढंग से काम कर सकता है। यह एक खिलाड़ी की विशेषज्ञता पर भी निर्भर है कि वह प्रशासक की राजनीतिक और विश्लेषणात्मक सोच के साथ मिलकर पूरे संघ का नेतृत्व करता है।

उषा एक महिला अध्यक्ष के रूप में बदलाव ला सकती हैं, बशर्ते उन्हें ऐसा करने का मौका दिया जाए। सच कहा जाए, तो ऐसे पद बड़ी जिम्मेदारी के साथ आते हैं और अक्सर इनमें जितना दिखता है, उससे कहीं अधिक होता है। यह मैं आज एक अकादमी चलाते हुए सीख रही हूं। यह सुनिश्चित करते हुए कि आपके किसी फैसले से कोई परेशान न हो, हर किसी को खुश करने की जरूरत को साधते हुए सावधान रहना होगा। यह एक कठिन डगर है। उषा के लिए यह आसान नहीं होने वाला है, लेकिन मुझे उम्मीद है कि वह ठोस बदलाव लाने में सक्षम होंगी।

मुझे उम्मीद है कि नया आईओए एथलीट आयोग के संबंध में दबावों के आगे नहीं झुकेगा, जैसा मैंने एथलीट निकायों को करते देखा है। मुझे याद है, मैं खिलाड़ियों के एक जीवंत संघ का हिस्सा बनना चाहती थी, पर मैंने सीखा कि संघ बहुत दमघोंटू भी हो सकता है। इसलिए मेरा मानना है, अगर उषा आईओए में ठोस बदलाव करती हैं, एथलीट आयोग को निर्णय लेने में अधिक आजादी देती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि खिलाड़ी संघ में सुरक्षित और आत्मविश्वास महसूस करें, तो यह देश में खेलों के लिए बड़ी जीत होगी।

इच्छुक और अनुभवी खिलाड़ियों से भरे संगठन में सबकी आवाज सुनी जानी चाहिए। खिलाड़ियों का समर्थन करने के लिए एक दृढ़ संगठन की जरूरत पड़ेगी। अगर हम सब साथ आएं, तो बदलाव ला सकते हैं। खिलाड़ियों को मुखर होना होगा। वैसे इतिहास मेरे लिए कठिन शिक्षक रहा है, यह मुझे थोड़ा शंकालु बना रहा है।

पी टी उषा को भारतीय ओलंपिक संघ में खिलाड़ियों के लिए अधिक आजादी की पैरोकारी करनी चाहिए। यह सुनिश्चित करना होगा कि संघ सभी खिलाड़ियों के कल्याण को प्राथमिकता दे। यह कल्याण खेल से परे भी है और इसमें हर तरह की समस्याएं शामिल हैं, जो खिलाड़ी अक्सर झेलते हैं। मानसिक स्वास्थ्य के मुद्दों से लेकर उत्पीड़न तक और यहां तक कि यौन उत्पीड़न जैसी परेशानियों से भी खिलाड़ियों को गुजरना पड़ता है। खुद एक खिलाड़ी के रूप में मैं जानती हूं कि हमारी खेल व्यवस्था में उत्पीड़न और शोषण के कई मामले हैं। कई खिलाड़ी इस बारे में बात करने में भी असमर्थ हैं या डरे हुए हैं। खिलाड़ियों और संगठन के बीच सहज संवाद की सुविधा ऐसी होनी चाहिए कि खिलाड़ी अपना पूरा ध्यान अपने खेल में उत्कृष्टता प्राप्त करने पर लगा सकें।

जो खिलाड़ी देश का प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं और जीतकर पदक व ट्रॉफियां घर लाना चाहते हैं, उन्हें सुरक्षित महसूस कराने की जरूरत है। खिलाड़ियों को यह बताना जरूरी है कि संगठन से संवाद के द्वार उनके लिए हमेशा खुले हैं। ऐसा माहौल चाहिए, जहां संघ अपने खिलाड़ियों की देखभाल करता हो, समस्या बड़ी हो या छोटी, संघ उनसे निपटने में मदद करता हो, जहां खिलाड़ियों के साथ सम्मान और गरिमापूर्ण व्यवहार किया जाता हो। किसी को मीडिया या अदालतों का सहारा न लेना पड़े। खेलों में शोषण का समय अब समाप्त होना चाहिए। जब उषा ने आईओए का कार्यभार संभाला है, मुझे उम्मीद है, ये आकांक्षाएं पूरी होंगी।